E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
www.allstudyjournal.com
IJAAS 2022; 4(4): 172-177
Received: 13-10-2022
Accepted: 21-11-2022

डॉ. नेहा कुमारी जायसवाल
सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग,
महिला महाविद्यालय, समस्तीपुर,
ल0 ना0 मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा,
बिहार, भारत

Corresponding Author:
डॉ. नेहा कुमारी जायसवाल
सहायक प्राध्यापक, इतिहास विभाग,
महिला महाविद्यालय, समस्तीपुर,
ल0 ना0 मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा,
बिहार, भारत

धर्म और विज्ञान का महत्व

डॉ. नेहा कुमारी जायसवाल

DOI: https://doi.org/10.33545/27068919.2022.v4.i4c.910

सारांश
मानव सभ्यता के विकास की कहानी, धर्म और विज्ञान, इन दोनों के बीच में सभ्यता के विकास की कहानी है। जिस प्रकार से किसी नदी का, यदि एक भी तट टूट जाए तो प्रवाह के अस्तित्व का समाप्त होने का खतरा होता है। प्रवाह निरंतर बना रहे हैं, आगे बढ़ता रहे, इसके लिए आवश्यक होता है कि इसके दोनों तट मजबूतीपूर्वक इस प्रकार से बने रहे कि जिससे प्रवाह का संतुलन बना रहे। नदी अपना मार्ग नहीं बदले, वह अपने लक्ष्य से भटके नहीं। ठीक उसी प्रकार सभ्यता के विकास के लिए धर्म और विज्ञान, इन दोनों तटों का बना रहना बहुत ही महत्वपूर्ण है। यदि इनमें से एक भी तट अपना संतुलन खो बैठे तो विकास का क्रम कब विनाश के क्रम में परिवर्तित हो जाएगा, यह हम मानव जाति से बेहतर कौन जान सकता है? धर्म और विज्ञान दोनों ही केवल मनुष्य के व्यक्तिगत विकास के लिए ही नहीं, अपितु हमारा यह कहना बिल्कुल ही न्यायोचित होगा कि समाज, देश तथा विश्व के कल्याण और प्रगति के पथ पर अग्रसर होने में अपना अलग अलग ही सही लेकिन महत्वपूर्ण योगदान देते हैं। आज हम जब अपने देश में देखते हैं तो धर्म और विज्ञान के बीच एक द्वन्द्व दिखाई देता है, जो प्रगतिशील बुद्धिजीवी वर्ग हैं, उनके अनुसार विज्ञान यानी प्रगतिशीलता, धर्म यानी पुरानापन। विज्ञान यानि तर्कबुद्धि, धर्म यानी अंधविश्वास। विज्ञान यानि प्रयोगशीलता, धर्म यानि किसी पुस्तक में लिखी हुई बात को ही प्रामाणिक मानना। इसलिए यह धारणा भी प्रचलित हुई है कि विकास करना है तो विज्ञान को अपनाओ धर्म को छोड़ो। इस नाते धर्म और धार्मिक प्रतीकों के लिए एक अजीब सी दृष्टि दिखाई देती है। प्रश्न खड़ा होता है कि कहीं न कहीं धर्म के संबंध में न्यूनता का भाव आधुनिक पढ़े-लिखे प्रगतिशील व्यक्ति के मन के अंदर है। फलतः द्वंद होता है, इस नाते पहले इन तीन प्रश्नों पर विचार करने की आवश्यकता है। पहला प्रश्न है कि धर्म और विज्ञान के बीच में द्वंद का क्या कारण है ? जबकि दोनों विकास के लिए महत्वपूर्ण हैं। दूसरा प्रश्न है कि धर्म और विज्ञान की बीच के द्वंद का मानव जाति पर क्या परिणाम हुआ है, क्या हो रहा है और क्या होगा? और तीसरा यदि परिणाम विपरीत हो रहा है तो इसका उपाय क्या है? जिससे यह द्वंद मिटे।

कुंजी शब्द– धर्म, विज्ञान, समन्वय, महत्त्व, द्वंद्व, परिणाम, विकास, विनाश।

प्रस्तावना
धर्म और विज्ञान के आपसी समन्वय तथा महत्व को ध्यान में रखते हुए आज के परिप्रेक्ष्य में इन तीन प्रश्नों पर विचार करना अत्यंत अनिवार्य हो जाता है।

'धर्म और विज्ञान' का महत्व इस विषय पर अध्ययन आज के वर्तमान समय की नितांत आवश्यकता है ताकि आज की पीढ़ी धर्म और विज्ञान के महत्व को भली-भांति समझे। न तो धर्म बुरा है और ना ही विज्ञान। संसार की कोई वस्तु बुरी तभी होती है, जब हम उसका जानबूझकर दुरुपयोग करते हैं। धर्म और विज्ञान तभी हानिकारक बन जाते हैं, जब इन का प्रयोग गलत ढंग से किया जाता है।आज के समय की मांग है कि धर्म को विज्ञानाभिमुख और विज्ञान को धर्माभिमुख बनाया जाय।

धर्म और विज्ञान का ऐतिहासिक महत्व
मानव सभ्यता के विकास की कहानी के दो मजबूत आधार स्तंभ है- धर्म और विज्ञान। विज्ञान और धर्म दोनों ही मनुष्य के जीवन को समान रूप से प्रभावित करते हैं। विज्ञान तथ्यों और प्रयोगों पर आधारित है, जबकि धर्म, आस्था और विश्वास पर। दोनों ही मनुष्य की अपार शक्ति के स्रोत हैं विज्ञान जहां मनुष्य को समस्त भौतिक सुखों की प्राप्ति कराता है, वहीं धर्म से मनुष्य में आध्यात्मिक शक्ति आती है। धर्म मनुष्य को भीतर से सुंदर बनाता है और विज्ञान बाहर से।

हमारे ऋषि-मुनियों ने वर्षों पहले विज्ञान को ना केवल धर्म के साथ जोड़ा, बल्कि लोगों को इसके व्यवहारिक ज्ञान के विषय में भी बतलाया। उनका मानना था कि यदि विज्ञान को सुव्यवस्थित ढंग से संवार कर मनुष्य के कल्याण में लगाया जाय तो यह धर्म बन जाता है। यही वजह है कि हमारे वेद,उपनिषद, दर्शन आदि जितने धर्म ग्रंथ हैं, उनमें विज्ञान पिरोया हुआ है। स्वामी विवेकानंद ने बड़े ही सुंदर ढंग से धर्म और विज्ञान को एक साथ रखते हुए उनके महत्व को बताया है।

विवेकानंद के अनुसार, "धर्म अध्यात्मिक जगत के सत्यों से उसी प्रकार संबंधित है जिस प्रकार से रसायनशास्त्र तथा दूसरे भौतिक विज्ञान जगत के सत्यों से हैं। जिस प्रकार से प्राकृतिक विज्ञान भौतिक जगत के नियमों का अनुसंधान करता है उसी प्रकार धर्म नैतिक और तत्व- मीमांसीय जगत के सत्यों सम्बद्ध और मनुष्य के आंतरिक स्वभाव के भव्य नियमों की खोज करता है |"

धर्म और विज्ञान के बीच द्वंद्व

विज्ञान और धर्म, सभ्यता के विकास रुपी नदी के दो तट हैं, जिनमें से एक भी तट के टूटने पर विकास के प्रवाह के आस्तित्व के समाप्त होने में देरी न लगेगी। इन दोनों में से यदि एक का भी संतुलन बिगड़ जाता है,तो विकास की रूपरेखा अपना रूप परिवर्तित कर विनाश के तांडव की रूपरेखा तैयार करने में जरा भी समय नहीं लेगी। यानी इन दोनों को साथ लेकर चलना ही हमारे विकास की नियति है।

फिर भी आज हम जब अपने देश में देखते हैं, तो धर्म और विज्ञान के बीच एक प्रकार का द्वंद्व दिखाई देता है। जो प्रगतिशील बुद्धिजीवी हैं उनके अनुसार विज्ञान और धर्म की परिभाषाएं अलग -अलग है।ये लोग इन दोनों के बीच विरोधाभास उत्पन्न करते हैं। इनके अनुसार विज्ञान यानी प्रगतिशीलता, धर्म यानी पुरानापन। विज्ञान यानी तर्कबुद्धि, धर्म यानी अंधविश्वास।विज्ञान यानी प्रयोगशीलता,धर्म यानी किसी पुस्तक में लिखी हुई बात को ही प्रामाणिक मानना।

इस समय में तो यही धारणा प्रचलित हो गई है कि विकास चाहिए तो विज्ञान को अपनाओ, धर्म को छोड़ दो।इस तरह से यह धर्म और धार्मिक प्रतीकों के प्रति अलग दृष्टिकोण को सिद्ध करता है। अब प्रश्न खड़ा होता है कि इस प्रकार का विचार क्यों उत्पन्न होता है कहीं ना कहीं धर्म के संबंध में न्यूनता का भाव बोध आधुनिक पढ़े-लिखे प्रगतिशील व्यक्ति के मन के अंदर है। फलतः यह द्वंद्व दिखाई देता है। इस नाते आज के परिपेक्ष्य को ध्यान में रखते हुए इन तीनों प्रश्नों पर विचार करने की आवश्यकता है। पहला प्रश्न है कि धर्म और विज्ञान के बीच में द्वंद का कारण क्या है? दूसरा प्रश्न है कि धर्म और विज्ञान के बीच के द्वंद का मानव जाति पर क्या परिणाम हुआ है, क्या हो रहा है और क्या होगा? और तीसरा यदि परिणाम विपरीत हो रहा है तो इसका उपाय क्या है? जिससे यह द्वंद्व मिटे।इन तीन प्रश्नों का पर विचार करना अत्यंत आवश्यक है।पहला प्रश्न खड़ा होता है कि आज धर्म तथा विज्ञान में द्वंद्व दिखाई देता है, जबकि दोनों ही व्यक्ति के विकास के लिए अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। लेकिन क्या ये द्वंद वास्तव में है कि नहीं?

इसके लिए यदि विचार करना हो तो हमारे लिए दो शब्दों का प्रयोग करना अनिवार्य हो जाता है। एक शब्द है दृष्टिकोण और दूसरा शब्द है दृश्यबिंदु। हम जो कुछ बोलते हैं, जो कुछ देखते हैं वह हमारे दृष्टिकोण के ऊपर निर्भर करता है। अगर व्यक्तियों का एक दृष्टिकोण है, तो शायद उनका दृश्य बिंदु भी एक प्रकार का होगा और यदि उनका दृष्टिकोण भिन्न है, तो दृश्य बिंदु भी भिन्न-भिन्न होंगे। इस परिप्रेक्ष्य में जब हम भारत के प्राचीन ग्रंथों को देखते हैं, तो हमें वहां धर्म और विज्ञान के बीच किसी प्रकार का द्वंद दिखाई नहीं देता, क्योंकि दृष्टिकोण अलग है। यदि मैं यहां खड़े होकर बोलती हूं, और आप सामने बैठे हैं, मेरा अगर यह दृष्टिकोण है और मानें कि दृष्टिकोण के हिसाब से आप उत्तर दिशा में बैठे हैं, तो मैं कहूंगी कि आप सब उत्तर दिशा में बैठे हैं, लेकिन मेरा दृष्टिकोण बदलकर अगर विपरीत हो जाता है,तो उस अवस्था में आप तो यही है लेकिन मेरे बोलने में अंतर आ जाता है और मेरे अनुसार अर्थात मेरा या दृश्य बिंदु हो जाता है कि आप दक्षिण दिशा में बैठे हैं और इसलिए यह जो अंतर आता है ये द्वंद्व है या नहीं, इसका उत्तर इस पर निर्भर है कि हम किस दृष्टिकोण पर खड़े हैं इसलिए जब हम ग्रंथों में देखते हैं वहां हमें कहीं द्वंद दिखाई नहीं देता।

प्राचीनतम उपनिषदों के अंदर वर्णन आता है कि शौनक ऋषि जब महर्षि अंगिरा के पास जाते हैं और ज्ञान प्राप्ति की याचना करते हुए महर्षि अंगिरा से कहते हैं कि–

"कस्मिन्नु भगवान विज्ञाते सर्वम् इदं विज्ञात भवतीति।"

वो कौन सी बात है, जिसको जान लेने के बाद और कुछ जानना शेष नहीं रह जाता?

इस पर महर्षि अंगिरा उत्तर देते हैं, "द्वै विद्ये वेदितव्ये इतिहस्म परा चैव अपरा च"

अर्थात "एक परा विद्या है दूसरी अपरा विद्या।" आगे फिर इसकी व्याख्या करते हैं, परा विद्या और अपरा विद्या, इन दोनों को जानने से ही वास्तविकता को जाना जा सकता है। इसका अगर आज की भाषा में विश्लेषण किया जाए तो यह कहा जा सकता है कि अपरा विद्या विज्ञान है और परा विद्या धर्म है। महर्षि अंगिरा यह कहते हैं कि दोनों को जानने की जरूरत है और ये दोनों एक दूसरे के विरोधी नहीं। इसलिए हमारे यहां पर धर्म कभी भी प्रयोग शीलता का विरोधी नहीं रहा है।

शंकराचार्य जैसे व्यक्ति जब 'गीता' के अपने भाष्य में लिखते हैं कि अगर सैकड़ों श्रुतिया भी यह कहें कि अग्नि शीतल होती है तो मैं इसे नहीं मानूंगा, क्योंकि यह प्रत्यक्ष अनुभूति के विरुद्ध है। इसलिए हमारे यहां पर किसी ग्रंथ में यदि कोई बात लिखी है और वह प्रयोग और अनुभव के विरुद्ध है, तो उसे नकारने का साहस चिंतकों में था। इसके लिए हमारे यहां कभी भी कोई द्वंद्व खड़े नहीं हुए। प्रयोगशीलता हमारे यहां पर स्वाभाविक रही है।

भरत मुनि द्वारा लिखे गए 'नाट्यशास्त्र' के तैंतीसवे अध्याय में विभिन्न वाद्य यंत्र कैसे बने, इसका वर्णन आता है। वे लिखते हैं कि स्वाति नाम के एक मुनि एक दिन जल लेने के लिए तालाब पर गए। अपने पात्र को जैसे ही उन्होंने कमल के पत्तों से आच्छादित तलाब में डाला कि अचानक जोरों से हवा चलने लगी और थोड़ी ही देर में एकदम वर्षा प्रारंभ हो गई। वर्षा की बूंदों के कमल के पत्तों पर गिरने से एक मधुर ध्वनि निकल रही थी। उस ध्वनि से स्वाति मुनि मुग्ध हो गये। वहां कई छोटे पत्ते थे, कुछ मध्यम आकार के पत्ते थे तथा कुछ बड़े पत्ते थे और हर पत्ते से अलग ध्वनि निकल रही थी। सुनते-सुनते उस ध्वनि को उन्होंने अपने हृदय के अंदर बसा लिया और उसी में खोए हुए अपनी कुटिया में वापस आए। कुछ पत्तों को भी अपने साथ लाए और कुटिया में आने के बाद उन पदों के ऊपर कृत्रिम ढंग से जल को गिरा कर वही ध्वनि उत्पन्न करने की प्रक्रिया प्रारंभ की। इस तरह सतत प्रयोग करते करते एक के बाद एक पणव, गुर्जर, दुरद, तथा अन्य प्रकार के वाद्यों की निर्मिती होती चली गई। इसलिए ध्यान में आता है

कि हमारे यहां पर प्रयोगशीलता के संदर्भ में अथवा धर्म तथा विज्ञान में किसी प्रकार का द्वंद नहीं था।

प्रश्न खड़ा होता है कि फिर द्वंद का कारण क्या है? जिन लोगों का दृष्टिकोण यूरोप का है, उनकी दृष्टि में इन दोनों के बीच द्वंद है और यूरोप में इसका जो कारण रहा, इसका यदि संक्षेप में वर्णन किया जाए तो हम देखेंगे कि आधुनिक युग में विज्ञान का विकास 16 वीं सदी से प्रारंभ होता है उस समय वहां दो धाराएं विकसित हुई। इसे विकसित करने का श्रेय जिनको जाता है वे हैं फ्रांसिस बेकन और रेने देकार्ते। बेकन ने कहा कि गणितीय सूत्रों के अंदर तार्किक ढंग से चीजों को सिद्ध किया जाना चाहिए। इसलिए प्रयोग करना, विश्लेषण करना, निष्कर्ष निकालना और फिर आगे बढ़ना, यह पद्धति वास्तविक ज्ञान प्राप्ति के लिए आवश्यक है। देकार्ते ने कहा कि किसी समग्र का सत्य अगर जानना है तो उस समग्र को तोड़िए। तोड़ते तोड़ते उसके छोटे से छोटे टुकड़े करते चले जाइए। अंततोगत्वा आप उसकी वास्तविकता को जान लेंगे। एक बार हमने यदि उस टुकड़े की वास्तविकता को जान लिया तो हम पूरी वास्तविकता को जान लेंगे। इस कारण से देकार्ते ने कहा कि जो भी ज्ञान में संभावना की बात करता है, वह अग्राह्य है। उसका मानव जीवन में कोई स्थान नहीं होना चाहिए।

परिणाम यह हुआ कि कला साहित्य ये सारी चीजें आधुनिक विज्ञान के निकष की धारा से बाहर हो गई। जब यह प्रक्रिया प्रारंभ हुई, उस दौरान हुए प्रयोगों के कारण ऐसे तथ्य तत्कालीन वैज्ञानिकों के ध्यान में आए, जो परंपरागत ईसाई धर्म की अवधारणाओं के विरुद्ध थे। ऐसा माना जाता है कि विज्ञान और धर्म का द्वंद्व वहां से प्रारंभ हुआ।

ओल्ड टेस्टामेंट में कहा गया है कि पृथ्वी केंद्र है बाकी सब ग्रह इसके आसपास चक्कर लगाते हैं। कॉपरनिकस गैलीलियो आदि ने इसके विरोध में कहा। इसका परिणाम यह हुआ कि एक तरह से धर्म उनके विरोध में खड़ा हो गया। इसलिए प्रारंभिक समय का यूरोपीय विज्ञान के विकास का जो इतिहास है, वह धर्म के द्वारा विज्ञान के विकास को अवरुद्ध करने प्रताड़ित करने का एक अत्यंत काला इतिहास है ।गैलीलियो अंधा होकर मर गया। जॉन केप्लर जिसने अपनी प्रतिभा से 750 ग्रहों का निरीक्षण करके यह कहा कि पृथ्वी जैसे कई अन्य जगत् है। धर्म विरोधी बातें होने के कारण चर्च के डर से वह भागता रहा और भागते भागते अंततोगत्वा गरीबी लाचारी और बेकारी की अवस्था में उसे मरना पड़ा ताई को दोनों को जिंदा जला दिया गया इस प्रकार हम देखते हैं कि धर्म और विज्ञान का यूरोप में जो द्वंद हुआ उसके परिणाम स्वरुप विज्ञान का झुकाव भौतिकता की और कुछ अधिक हो गया इसलिए कोई पारलौकिक बातें, कोई अतिंद्रीय बातें यह सब कल्पनाएं हैं, जो प्रत्यक्ष प्रयोग से सिद्ध हो सकता है वही सत्य है। इसी को आधार मानकर विज्ञान की धारा वहां पर प्रवाहित हुई।

हमारे देश में अंग्रेजों का शासन रहा और धीरे-धीरे उनकी शिक्षा पद्धति आई जिसके फलस्वरूप धर्म और विज्ञान के बीच के द्वंद की जो अवधारणा यूरोप में थी वह हमारे यहां भी आ गई। परिणाम स्वरूप हमारे यहां पर भी दो प्रकार की धाराएं देश में दिखाई देने लगी। एक देश का सर्वमान्य आदमी है, जिसका दृष्टिकोण भारत का है, उसकी नजर में धर्म अस्तित्व का कारण है अस्मिता का कारण है, विकास का सोपान है, जीवन का एक अमूल्य तत्व है लेकिन जिन का दृष्टिकोण यूरोप का है उनकी नजर में धर्म विज्ञान विरोधी है, तो निष्कर्षतः मूल कारण यही हम पाते हैं कि विज्ञान और धर्म के बीच में द्वंद का जो कारण है वह हमारे दृष्टिकोण का अंतर ही है। हमारे यहां धर्म को जिस रूप में देखा जाता है उनकी अनेक परिभाषाएं मिलती हैं।

धर्म की अवधारणा

धर्म भारतीय संस्कृति और भारतीय दर्शन की प्रमुख संकल्पना है। "धर्म" शब्द का पश्चिमी भाषाओं में किसी समतुल्य शब्द का पाना बहुत कठिन है। साधारण शब्दों में धर्म के बहुत से अर्थ है - कर्तव्य, अहिंसा, न्याय, सदाचरण, सद्गुण आदि। धर्म का शाब्दिक अर्थ होता है, 'धारण करने योग्य' सबसे उचित धारणा,अर्थात जिसे सबको धारण करना चाहिए, यह मानव धर्म है। "धर्म" एक परंपरा के मानने वालों का समूह है। ऐसा माना जाता है कि धर्म मानव को मानव बनाता है। हमारे यहां धर्म को प्राचीन काल से ही जिस रूप में देखा गया है, उनकी अनेक परिभाषाएं मिलती हैं। लेकिन उनमें तीन परिभाषाएं ऐसी हैं, जो इसके क्रमिक विकास को बताती हैं। सबसे प्राचीन संदर्भ वेदों में मिलता है। ऋग्वेद में 'धर्म' शब्द का प्रयोग करते हुए कहा गया है कि विष्णु ने परम पराक्रम किया, तीन पगों में धरती को नापा और आखिर में शब्द प्रयोग है "अतो धर्माणि धारयेत्" अर्थात "धर्म वही है जो धारण करता है।" धारणा का तात्पर्य क्या है? इस पर अगर विचार किया जाए तो दो चीजें ध्यान में आती हैं। एक अस्तित्व की रक्षा और दूसरा विकास।हर एक की अपनी एक आत्मा है, वह रहेगी तो उसका अस्तित्व रहेगा, अन्यथा वह नष्ट हो जाएगा। अग्नि के अंदर अग्नित्व है तो उसकी अस्मिता है। यदि अग्नित्व को निकाल देंगे, दाहकता उसमें से निकाल देंगे तो अग्नि का अस्तित्व समाप्त हो जाएगा। वैसे ही हर एक की अपनी अपनी अस्मिता है। यह अस्तित्व जिसके कारण से है, उसको भी धर्म कहा गया है। इसलिए हमारे यहां पर अग्नि का धर्म, जल का धर्म, वायु का धर्म, हर एक का धर्म ऐसे शब्द प्रचलित हुए हैं। फिर दूसरी बात आई कि सृष्टि के अंदर जिसमें चेतना कम विकसित है, वह जड़ है।अन्य जिनमें चेतना थोड़ी विकसित है,उनका स्वभाव है कि वे यथास्थिति में नहीं रहते।उसमें परिवर्तन होता है। उसका विकास होता है। इसलिए विकसित होना, ये चेतना का स्वभाव है।

अतः इस विकास को भी हम दो प्रकार से देखते हैं। पेड़ों का, पौधों का और पशुओं का विकास, एक प्रकार से कहना चाहिए कि यांत्रिक विकास है। प्रकृति ने कुछ मर्यादाएं बनाई है, उसे वो लांघ नहीं सकते। उदाहरण के लिए बछड़ा जन्म लेते ही चलने लगता है। लेकिन गाय का बछड़ा चाहे भी तो पक्षी की तरह उड़ नहीं सकता है।कोई पशु के बच्चे पैदा होते ही बोली जानते हैं।लेकिन अपनी बोली के अतिरिक्त दूसरी बोली अगर बोलना चाहे, तो भी नहीं बोल सकते। अर्थात कुछ रचनाएं ऐसी हैं जिनका विकास यांत्रिक होता है, प्रकृति की मर्यादा में होता है। लेकिन कुछ विकास ऐसा है जो प्रकृति की मर्यादा के बाहर होता है, उसमें मनुष्य आता है। मनुष्य में स्वतंत्र इच्छा तथा बुद्धि नामक दो तत्व होते है। इसलिए मनुष्य को पशु के समान पैदा होते ही चलने नहीं आता था और उसने हर तरह की चाल चलनी सीख ली थी। वह पानी के अंदर भी चलने लगा, हवा में भी चलने लगा, जमीन पर भी चलता है। उसको बोली नहीं आती थी लेकिन उसने हर प्रकार की बोली विकसित की। कुछ लोग आदमी तो आदमी पशु व जानवरों की बोलियां भी बखूबी निकाल लेते हैं। मनुष्य के अंदर यह विशेषता है कि वह विकास यात्रा में प्रकृति की मर्यादा को लांघ सकता है। इसलिए प्रश्न यह आया कि इसकी दिशा कौनसी हो? इस पर धर्म की दूसरी परिभाषा महर्षि कणाद ने दी है– "यदा अभ्युदय निः श्रेयस सिद्धिः स धर्मः।"

बताया गया है कि विकास तो होना चाहिए, लेकिन लेकिन कैसा होना चाहिए, अभ्युदय और निश्रयस। वह भौतिक और आध्यात्मिक दोनों का समन्वित रूप होना चाहिए। इसलिए धर्म को उसी रूप में कहा गया है।

जीवन के अंदर जब वह आचरण में उतरेगा तब विकास होगा। सब पोथी के अंदर है, तो उससे जीवन में कोई बदलाव नहीं आएगा। जब यह अंदर उतरेंगे तब मनुष्य अपने आप में बदलाव ला सकता है। इसी प्रकार तीसरी परिभाषा धर्म की इस प्रकार कही गई है कि– "आचार: प्रथमो धर्म:।"
जो हम कह रहे हैं वह आचरण में उतारना, यह प्रथम धर्म है और इस नाते से यह अस्तित्व और विकास। विकास हेतु या आचरण हो, इसको लेकर अनेक महापुरुषों ने हमारे यहां पर धर्म की व्याख्या की।

मनु ने मानव धर्म के दस लक्षण बताये हैं।

धृति: क्षमा दमोअस्तेयम् शौचमि- इंद्रियनिग्रह:।
धीर्विद्या सत्यम क्रोधो, दशकम् धर्मलक्षणम्।।

धृति यानि धैर्य, क्षमा, दम, अस्तेय शौच, इंद्रियनिग्रह:, धर्म, विद्या, सत्य और अक्रोध; ये दस मानव धर्म के लक्षण हैं।
जो अपने अनुकूल ना हो वैसा व्यवहार दूसरे के साथ नहीं करना चाहिए- यह धर्म की कसौटी है।

श्रूयताम् धर्म सर्वस्वं श्रुत्वा चैव अनुवर्त्यताम्।
आत्मनः प्रति- कुलानि, परेषाम् न समाचरेत्।।

धर्म का सर्वस्य क्या है, यह सुनो और सुनकर उस पर चलो! अपने को जो अच्छा ना लगे, वैसा आचरण दूसरे के साथ नहीं करना चाहिए।
वात्स्यायन ने धर्म की परिभाषा इस प्रकार दी है वात्स्यायन ने धर्म और अधर्म की तुलना करके धर्म को स्पष्ट किया है। वात्सायन मानते हैं कि मानव के लिए धर्म मनसा, वाचा, कर्मणा होता है। यह केवल क्रिया या कर्मों से संबंधित नहीं है बल्कि धर्म चिंतन और वाणी से भी संबंधित है।

महाभारत के वन पर्व 313 / 128 में कहा गया है-

धर्म एव हतो हंति धर्मो रक्षति रक्षित:।
तस्मात् धर्मों हंतव्यो मा नो धर्मो हतो अवधीत्।।

मरा हुआ धर्म मारने वाले का नाश, और रक्षित धर्म रक्षक की रक्षा करता है। इसलिए धर्म का हनन कभी नहीं करना चाहिए, इस डर से कि मारा हुआ धर्म कभी हमको न मार डाले। महात्मा गांधी ने धर्म का असली मतलब बताया है कि धर्म कोई पंथ नहीं बल्कि मानव के भीतर उपस्थित मूल्य होते हैं। यह मूल्य दया, करुणा प्रेम, सत्य, न्याय आदि होते हैं धर्म का एक सर्वेक्षण, सनी विज्ञान की अवधारणा विज्ञान की अवधारणा का संबंध विशेष ज्ञान से है, जो सभी तरह से सत्यापित हो। विज्ञान किसी विषय या वस्तु का वास्तविक क्रमबद्ध, सुव्यवस्थित और विशिष्ट ज्ञान होता है। यह प्रेक्षण तथा प्रयोगों द्वारा प्रमाणित होता है। इसमें कोई अंधविश्वास नहीं होता। इसके अंतर्गत भौतिक जगत तथा प्रकृति के नियमों का अध्ययन किया जाता है। जिससे वस्तु के प्रकृति, गुण तथा उसके व्यवहार को जानने में मदद मिलती है। जैसे यदि विज्ञान कहता है कि पानी को जीरो डिग्री तक पहुंचाया जाए तो वह ठोस बन जाता है। यह कथन सभी दृष्टिकोण से सत्यापित है। हम चाहे तो इसका प्रयोग करके देख सकते हैं। इस प्रकार विज्ञान अधिक व्यापक व व्यवहारिक अर्थों में प्राकृतिक घटनाओं एवं नियमों का सुव्यवस्थित व क्रमबद्ध अध्ययन तथा उससे प्राप्त ज्ञान है।

आइंस्टीन के अनुसार "हमारी ज्ञान अनुभूतियों की अस्त- व्यस्त विभिन्नता को एक तर्क पूर्ण विचार प्रणाली निर्मित करने के प्रयास को विज्ञान कहते हैं।" कार्लो प्रॉपर के अनुसार "विज्ञान निरंतर क्रांतिकारी परिवर्तन की स्थिति है और वैज्ञानिक सिद्धांत तब तक वैज्ञानिक नहीं होते हैं, जब तक कि उन्हें आगामी अनुभव तथा प्रमाण द्वारा परिवर्तित किया जाना निहित नहीं है।" पंडित जवाहरलाल नेहरू के अनुसार "विज्ञान का अर्थ केवल मात्र परखनली तथा कुछ बड़ा या छोटा बनाने के लिए इसको और उसको मिलाना ही नहीं है, अपितु वैज्ञानिक विधि के अनुसार हमारे मस्तिष्क को प्रशिक्षण देना ही विज्ञान है।" आदि काल से ही मानव जिज्ञासु प्रवृत्ति का रहा है। वह प्रकृति में घटित हो रही घटनाओं तथा परिवर्तनों के विषय में जानने के प्रति उत्सुक रहा है। यही उत्सुकता उसे विज्ञान के नज़दीक लाती है। विज्ञान की खोज के साथ-साथ इसका मनुष्य के व्यवहार और उसकी सोच पर भी प्रभाव पड़ने लगा है।

धर्म और विज्ञान का स्वरूप

धर्म और विज्ञान ये दो नहीं वस्तुतः एक ही विषय हैं। धर्म स्वयं विज्ञान है। एक वैज्ञानिक यहां हिंदुस्तान में बैठकर किसी प्रकार का प्रयोग या अन्वेषण करता है और जो निष्कर्ष उसके प्रयोग का निकलेगा। वही निष्कर्ष दूर विदेश में बैठा हुआ एक वैज्ञानिक उसी तरह का प्रयोग करके प्राप्त करेगा। हजार वर्ष पहले किसी वैज्ञानिक ने प्रयोग करके जो फल निकाला था। हजार वर्ष बाद भी आज का वैज्ञानिक वैसे ही प्रयोग से वही फल प्राप्त करेगा। स्पष्ट है कि बिना काल से बंधे हुए यह सत्य ही विज्ञान है। देश या काल के कारण इसमें कोई अंतर नहीं आ सकता। यही बात धर्म के लिए भी हम कह सकते हैं। अतः मानना पड़ेगा कि धर्म स्वयं विज्ञान है। किसी वस्तु को जानने का जो माध्यम है, वह है विज्ञान और उस माध्यम के द्वारा जो कुछ भी प्राप्त होता है, वह है धर्म। विज्ञान वस्तु को जानने की प्रक्रिया है और धर्म आत्मा को पाने की प्रक्रिया है, साधन है।

विज्ञान द्वारा सत्य की खोज

मनुष्य में सत्य की जिज्ञासा और उसकी खोज का प्रयत्न चिरकाल से रहा है। उसका स्थूल रूप हमारे सामने है। मनुष्य केवल स्थूल से संतुष्ट नहीं होता । वह निरंतर स्थूल से सूक्ष्म की ओर प्रस्थान करता है। धर्म की खोज सूक्ष्म तत्वों की खोज हैं आत्मा परमात्मा परमाणु कर्म ये सभी सूक्ष्म तत्व है। साधारण जीवन यात्रा से इनका सीधा संबंध नहीं है। इस खोज का माध्यम रहा है, अंतर्दृष्टि,अतिंद्रीय चेतना और गंभीर एवं एकाग्र चिंतन। विज्ञान ने भी सूक्ष्म शक्तियों को खोजा है, उसकी खोज का माध्यम है सूक्ष्मदर्शी उपकरण। वैज्ञानिक जगत में यह उपकरण प्रचुर मात्रा में विकसित हुए। इनके द्वारा एक सामान्य मनुष्य भी सूक्ष्म तत्वों को जानता है किंतु एक वैज्ञानिक उपकरण पर्याप्त नहीं है। उसके लिए अंतर्दृष्टि,चिंतन की एकाग्रता और निर्विचारिता उतने ही आवश्यक हैं, जितने एक मर्म की खोज करने वाले के लिए |

धर्म द्वारा सत्य की खोज

धर्म भी सत्य की खोज करता है और विज्ञान भी सत्य की खोज करता है। जहां सत्य की खोज का प्रश्न है। दोनों एक बिंदु पर आ जाते हैं और उद्देश्य की दृष्टि से दोनों के अवस्थित बिंदु भिन्न भिन्न हो जाते हैं। धर्म के क्षेत्र में सत्य की खोज का उद्देश्य है– अस्तित्व और पदार्थ का विकास। विज्ञान ने

जीवन यात्रा के लिए उपयोगी अनेक तत्व खोजे। खाद्य, चिकित्सा, सुविधा के क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति हुई है। धर्म ने सुविधा देने वाला कोई तत्व नहीं खोजा। पर उसने चेतना के उन आयामों की खोज की, जो सुविधा के अभाव में होने वाली असुविधा को सहन कर प्रसन्नतापूर्वक जीवन व्यापन कर सके।

धर्म और विज्ञान के बीच समन्वय तथा उनकी व्यावहारिक महानता

आज लोग विज्ञान को केवल दो शताब्दी पुराना ही मान बैठे हैं। इस काल में जो अन्वेषण और प्राप्ति विज्ञान ने की है, सिर्फ वही विज्ञान है। ऐसी लोगों की धारणा बन गई है, लेकिन जो उपलब्धियां सामने है, केवल वही विज्ञान नहीं। प्राचीन उपलब्धियों कोयथार्थ भाव से देखना ही विज्ञान है। आत्मा से भिन्न कोई विज्ञान है ही नहीं। अनु बम विज्ञान की देन है, लेकिन वह अपने आप कुछ नहीं कर सकता, क्योंकि वह जड़ है, चेतना की शक्ति उसका उपयोग करके, विनाश को टालती है। शक्तियों का विकास कोई दोष नहीं लेकिन उनका उपयोग सही ढंग से हो जो विज्ञान को बुरा कहते हैं उन्हें यह भी मानना पड़ेगा कि धर्म भी बुरा है क्योंकि उनको अलग करने का हमारे पास कोई साधन नहीं है। धर्म और विज्ञान त्रिकालाबाधित सत्य हैं। अध्यात्म की तरह विज्ञान का क्षेत्र भी अत्यंत प्राचीन है। विज्ञान के लिए भी हजारों ने अपने आप को बलिदान कर दिया है। बहुत सारे अनुसंधान विज्ञान के क्षेत्र में अध्यात्म की तरह ही हुए हैं।

आज यदि हम बहुत सारी सुविधाओं का उपयोग कर अपने जीवन को खुशहाल बना सके हैं, तो वो हमारे बहुत सारे वैज्ञानिकों के अथक प्रयासों का ही परिणाम है। इसी तरह के अनुसंधान आध्यात्मिक क्षेत्र में भी किए गए हैं। अनेक निर्गुण साधना है कि तभी अध्यात्म की अनुभूतियां प्राप्त हुई। गुस्सा या आवेग जब आता है तो तत्काल दो क्षण के लिए सांस रोक ले। गुस्सा ठंडा पड़ जाएगा। इसी तरह के अनेक प्रयोग किए गए हैं। योग शास्त्र को जानने वाला खोज करके देखें कि प्राचीन आचार्य ने कितने प्रयोग किए हैं। प्राचीन समय में हजारों कोस दूर बैठा साधु किसी अन्य साधु को सिर्फ याद करके उसका आसन हिला सकता था और दूसरा साधू यह समझ जाता था कि उसे याद किया गया है। इस दृष्टि से धर्म और विज्ञान दो धाराएं या शाखाएं नहीं है। एक ही चेतना प्रवाह की दो कड़िया है। अर्थात मूल एक हैं और टहनियां दो है। जिस तरह विज्ञान की उपलब्धियों का उपयोग विनाशकारी कार्यों में किया गया है, जो सर्वविदित है। कोरोना महामारी इस विज्ञान की एक बहुत बड़ी देन है जिसने लगभग पूरे विश्व को बुरी तरह से प्रभावित किया। उसी प्रकार धर्म का उपयोग भी अनुचित ढंग से किया गया है और कहीं कहीं तो इसका अत्यधिक दुरुपयोग भी किया गया है।

इस तरह हम देखते हैं कि विज्ञान और धर्म का चरित्र भिन्न-भिन्न होते हुए भी एक है और मैं तो कहती हूं कि यह विशाल नगरों में बने मकानों के फ्लैटों की तरह है। जहां एक ही मकान में कई फ्लैट होते हैं, लेकिन उनमें रहने वाले वर्षों से वहां रहते हुए भी एक दूसरे से अपरिचित होते हैं। धर्म से प्रभावित लोग मानते हैं कि विज्ञान ने मनुष्य जाति को संहार के कगार पर पहुंचा दिया। विज्ञान से प्रभावित लोग मानते हैं कि धर्म ने मनुष्य को परंपरावादी रूढ़िवादी बना दिया है। इस आरोप और प्रत्यारोप में सच्चाई नहीं है, सच्चाई यह है कि धर्म और विज्ञान सत्य को उपलब्ध करने की पद्धतियां है। धर्म का रूढ़िवाद से और विज्ञान का संहारक शब्दों से कोई संबंध नहीं है। विज्ञान शक्ति है और धर्म उस शक्ति को सीखने का नियमन है।

निष्कर्षत

यह कहना न्यायोचित होगा कि ना तो विज्ञान और धर्म के बीच द्वंद का स्थान प्राचीन काल में था, न तो मध्यकाल में था और ना ही आधुनिक काल में है। ये दोनों इतने महत्वपूर्ण तथा इनका अस्तित्व एक दूसरे में इस प्रकार समाहित है कि हम चाह कर भी उनके बीच विरोधाभास उत्पन्न नहीं कर सकते। यदि ऐसा होता है, तो इन दोनों का अस्तित्व अधूरा रह जाएगा और इस अधूरे अस्तित्व के साथ विकास की प्रक्रिया की कल्पना करना भी हमारे लिए असंभव है। हालांकि इन दोनों का महत्व बहुत हद तक इनके उपयोग करने के ढंग पर निर्भर करता है। यह दोनों ही जहां सदुपयोग के बल पर लोककल्याणकारी तथा विकासकर्ता के रूप में दिखते हैं,वहीं अगर धर्म में कुरीतियां लाई जाए या दिखावा आ जाए तो बहुत हद तक यह सांप्रदायिकता का रूप ले लेती है, जो दंगों का रूप धारण कर लेती है और जब ऐसा होता है तो जन और धन दोनों की अपार क्षति होती है।

अभी हाल ही में मैंने अखबार में पढ़ा कि चैत्र नवरात्र में मांस और मछली यानी मांसाहारी खानों का बिकना बंद होना चाहिए,यही नहीं बल्कि लहसुन और प्याज वाले खानों को भी बंद किया जाना चाहिए,लेकिन ऐसी मांग करने वालों से पूछा जाना चाहिए कि क्या रामनवमी आज से मनाई जा रही है। रामनवमी का इतिहास बहुत पुराना है। विशेष बात यह है कि भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है, जहां सभी धर्मों के लोग रहते हैं। ऐसा करना अन्य सभी धर्मों पर, एक विशेष धर्म को बलपूर्वक थोपा जाना नहीं हुआ ?यह लोगों में मनमुटाव का कारण उत्पन्न नहीं करेंगे? इसी तरह की घटनाओं द्वारा धर्म का दुरुपयोग कर लोग धर्म की आड़ में सांप्रदायिकता का खेल खेलते हैं।

ठीक इसी प्रकार विज्ञान का दुरुपयोग किस प्रकार हमें तबाह और बर्बाद कर एक संहारक के रूप में सामने आता है आज के परिप्रेक्ष्य तथा विश्व स्तर पर इससे प्रभावित घटनाओं के कारण हम इसे भली-भांति समझ चुके हैं। अतः इस शोध पत्र के अध्ययन की आज के वर्तमान समय में काफी प्रासंगिकता है। ताकि आज की पीढ़ी शिक्षित वर्ग की पीढ़ी है। यह विज्ञान और धर्म के वास्तविक स्वरूप तथा उनके महत्व को समझें। उनके दुरुपयोग से होने वाले विनाश को भलीभांति समझे। राजनीतिक समूह की बातों में पढ़कर धर्म और विज्ञान को विरोधाभासी न समझें।

हमारे यहां विकास की प्रक्रिया में मनुष्य परिवार का विरोधी नहीं हुआ, परिवार समाज का विरोधी नहीं हुआ, समाज सृष्टि का विरोधी नहीं हुआ, कुल मिलाकर सब परस्पर पूरक रहे। आज की जो त्रासदी है, दुनिया के सामने उस त्रासदी से निकलने के लिए यह ज्ञान, एक प्रकार से कहना चाहिए कि एक विरासत हो सकता है।

पंडित दीनदयाल उपाध्याय कहते हैं

"विश्व का आज तक का ज्ञान और हमारी संपूर्ण परंपरा के आधार पर हम एक ऐसे भारत का निर्माण करेंगे, जो हमारे पूर्वजों के भारत से अधिक गौरवशाली होगा। भारत में जन्म लिया हुआ व्यक्ति अपने व्यक्तित्व का विकास करता हुआ ना केवल समग्र मानव, अपितु सृष्टि के साथ एकात्मता प्राप्त करता हुआ नर से नारायण बन सकेगा। यही हमारी संस्कृति का शाश्वत, दैवीय और प्रवाह मान रूप है।"

आज चौराहे पर खड़ी हुई मानवता के लिए यही हमारा दिग्दर्शन है।

संदर्भ

1. संकलन प्रभात झा– समर्थ भारत, पृष्ठ संख्या- 43 से 56

2. एम एल गुप्ता, डीडी शर्मा– सामाजिक विचारों का इतिहास, पृष्ठ संख्या- 57, 58
3. सुरेश कुमार पांडे– इतिहास-उपकार प्रकाशन, पृष्ठ संख्या- 33, 34, से 35
4. डॉक्टर राधाकृष्ण शर्मा– बिहार का इतिहास, पृष्ठ संख्या- 56-57
5. विज्ञान और धर्म– क्विज ऑन गुड ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य, कैंब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, पृष्ठ संख्या- 42
6. क्लॉस क्लोस्टरमायर– हिंदू धर्म का एक सर्वेक्षण, सनी प्रेस, आईएसबीएन 0-88706-807-3
7. डॉक्टर ए के मित्तल– भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, पृष्ठ संख्या– 119,120, 121, 122 123
8. डॉ के एल खुराना– मध्यकालीन भारतीय संस्कृति, पृष्ठ संख्या– 94, 114
9. डॉक्टर हेतु भारद्वाज– संस्कृति और साहित्य, पृष्ठ सं– 83
10. संपादकीय लेख, हिंदुस्तान समाचार पत्र–12, अप्रैल– 2022